संपादकीय/व्यवस्थापकीय कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.
2/36, अन्सारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002
दूरभाषः 23270377, 41050047
फैक्स नं. : 66326202

E-Mail : editorhans@gmail.com
website : www.hansmonthly.in

मूल्य : 25 रुपए, वार्षिक : 250 रुपए
संस्था और पुस्तकालय : 400 रुपए
आजीवन : 5000 रुपए, विदेशों में : 50 डॉलर
सारे भुगतान मनीआर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. के नाम से किए जाएं.
कृपया दिल्ली से बाहर के चैक में बैंक कमीशन
के 50/- रुपए अतिरिक्त जोड़ दें.

हंस/अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे.
अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है.

संपादक-प्रकाशक-मुद्रकः राजेन्द्र यादव द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि., 2/36 अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा एम.पी. प्रिंटर्स (प्रो. भास्कर इन्डस्ट्रीज लि.) बी-220 फेज-II नोएडा गाजियाबाद (उ.प्र.) से मुद्रित.

'केंद्रीय हिंदी संस्थान', आगरा से सहयोग प्राप्त

संस्थापक : प्रेमचंद : 1930

पूर्णांक-282 वर्षः 25 अंकः 9 अप्रैल, 2010

हंस

जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

संपादक
राजेन्द्र यादव

कार्यकारी संपादक
संजीव

सांस्कृतिक प्रतिनिधि
अजित राय

प्रबंध सहायक
वीना उनियाल

कार्यालय सहायक
किशन राय, दुर्गा प्रसाद

लखनऊ मुख्य प्रतिनिधि
राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल

आवरण-चित्र
बंशीलाल परमार

रेखाचित्र
कामिनी बघेल, शैली, कुंती, सुधीर सागर, अक्षय

इस अंक में

कहानियां
15. कृष्ण : डॉ. केशुभाई देसाई (गुजराती से अनुवाद : दया प्रजापति)
21. चरित्रहीन : प्रतिभा दास
27. कुआं : स्वप्निल सुधाकर अजबे
32. कैसा सच : आशा प्रभात
39. लकवा : हुसैन उल हक (उर्दू से अनुवाद : ओम प्रभाकर)

मेरी तेरी उसकी बात
2. भूमंडल का सांड़... : राजेन्द्र यादव

बात बोलेगी
95. शरशय्या पर राष्ट्र : संजीव

कविताएं
46. शैलेश बोहरे 'संजरिया', 46. रोज़लीन, 47. सीमा स्वधा, 47. मंजरी श्रीवास्तव, 48. निरुपम

बीच बहस में
54. आसमां और भी हैं : शाइस्ता फाख़री
58. नादीन को चार शौहर.. : राजकिशोर
73. स्त्री विमर्श : समग्रता में परखने की जरूरत : सूर्यकांत नागर

कठघरे में
66. सीमा आजाद कौन है : शीरीं
68. मैं न सलमान रुश्दी हूं, न हुसैन : तसलीमा नसरीन

संस्मरण
79. दोस्त राजेन्द्र... : कृष्णा अग्निहोत्री

जिन्होंने मुझे बिगाड़ा
60. हम तो बिगड़े हैं सनम : सपना सिंह

ग़ज़लें
57. जहीर कुरेशी, 59. सुरेश मक्कड़, 72. मधुवेश

लघुकथा
20. कुशेश्वर, 55. उदय ठाकुर, 57 सूरजपाल चौहान, 59. कमल चोपड़ा, 61. डॉ. हरदयाल सिंह पंवार, 72. ऋतु सारस्वत, 74. मंजुला श्रीवास्तव, 75. ज्ञानदेव मुकेश, 81. संतोष सुपेकर, 83,84,89. अशोक गुप्ता, 93. ज्ञानदेव मुकेश

परदा इधर : परदा उधर
62. जेंडर जेहाद... : शीबा असलम फ़हमी

निकष पर
86. अलीफ यानी क्या : ज़ाहिद खान

लेकिन दरवाजा
51. अंतर : प्रभात दुबे

परंपरा
65. हिंदी ग़ज़ल का एक और... : शहरयार

हाइकू
53. केशव शरण

फिल्म
87. थ्री ईडियट्स : पुरुषोत्तम कुमार गुप्ता

परख
50. जश्न-ए-तालीम... : प्रेमपाल शर्मा
52. नवउदारवादी व्यवस्था... : जितेंद्र गुप्ता
56. दल्ली ऽ ऽ ऽ ! ... : सच्चिदानंद
71. अतीत की रोशनी... : अभिषेक कश्यप
76. अपने पूरे 'स्व'... : रजनी गुप्त
82. समाज के आईने में स्त्री के प्रतिबिंब : सुमित्रा महरोल
85. सागर के इस पार... : सुशीला पुरी
89. आदर्श के टूटने... : श्रवण कुमार

नेतघड़ी
70. कथा समय–2010 : राम नरेश राम

कसौटी
90. नागरिक पत्रकारिता... : मुकेश कुमार

समकालीन सृजन-संदर्भ
92. लेव तोल्सतोय... : भारत भारद्वाज

समाज के आईने में स्त्री के प्रतिबिंब

सुमित्रा महरोल

आईने के समान है वरिष्ठ लेखिका सुधा अरोड़ा की नवीन पुस्तक 'आम औरत ज़िंदा सवाल' जिसमें समकालीन यथार्थ के स्त्री संबंधी अनेक चेहरों के प्रतिबिंब देखे जा सकते हैं. युगीन यथार्थ की विभिन्न परतों को बड़ी सूक्ष्मता से निरखने-परखने व उनके लिए उत्तरदायी कारणों को विश्लेषित करने का महती प्रयास लेखिका ने इसमें किया है. नारी इस पुस्तक के केंद्र में है. धर्म, वर्ग, श्रेणी एवं सरहदों की सीमा पार कर स्त्री के प्रति उनकी पक्षधरता न केवल मानवीयता बल्कि उच्चतर मानवीय मूल्यों के प्रति उनकी आस्था की परिचायक है.

पुस्तक का आरंभ सुधा जी के आत्मकथ्य 'एक गुमशुदा दोस्त की तलाश' से होता है. फिर एक हिंदी दैनिक समाचार पत्र के लिए 'वामा' स्तंभ के अंतर्गत लिखे लेख हैं. स्त्री और हिंसा के विभिन्न रूपों को केंद्र में रखकर लिखे छह आलेख इसके बाद आते हैं. पुस्तक के अगले भाग में मीडिया और औरत संबंधी पांच लेख हैं व अंतिम खंड कुरान की नारीवादी व्याख्या से संबंधित है.

एक अति संवेदनशील भावप्रवण लेखिका और सामाजिक पारिवारिक दायरों में आबद्ध स्त्री के निरंतर द्वंद्व की कहानी है सुधा अरोड़ा का आत्मकथांश 'एक गुमशुदा दोस्त की तलाश'. किसी समय बेहद सजीव उनके भीतर की लेखिका इस स्त्री विमुख, असंवेदनशील पितृसत्तात्मक समाज से स्थान-स्थान पर आहत तो होती है पर घुटने नहीं टेकती जब-तब सिर उठाकर अपनी मुखर उपस्थिति दर्ज कराती ही जाती है. इसके अतिरिक्त तत्कालीन सामाजिक-पारिवारिक परिवेश पति-पत्नी के बेहद नाजुक जटिल संबंधों

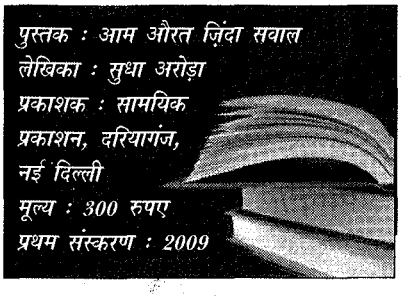

के ताने-बाने, अति चर्चित साहित्यिक व्यक्तियों की अपरिचित नवीन रूपाकृतियां इस आत्मकथ्य के माध्यम से आकार ग्रहण करती हैं.

लेखिका द्वारा रचित आलेखों के माध्यम से स्त्री के प्रति समाज के असमान, असहिष्णु दृष्टिकोण का अनुमान सहजता से लगाया जा सकता है. बुनियादी अधिकारों तक से वंचित स्त्री को केवल वंश वृद्धि एवं गृह प्रबंधिका की तरह पुरुष प्रधान समाज इस्तेमाल करता है. स्त्री के श्रम का कोई मूल्य नहीं, उसकी इच्छा, भावना और सुविधा का कोई मान नहीं. ताजिंदगी बेजुबान पशु की तरह स्त्री को हाशिए पर रखकर साधन के रूप में प्रयोग करने की साजिश अनवरत चलती रहे इसकी व्यवस्था स्त्री के अबोध बचपन से ही शुरू हो जाती है. पति परमेश्वर स्वरूप है, सवाल न करना मान-प्रतिष्ठा के लिए कुर्बान हो जाना संस्कारों के नाम पर जन्म घुट्टी की तरह स्त्री को पिलाया जाता है. नारी संबंधी यथास्थिति को बनाए रखने के लिए पुरुष द्वारा अपनाए जाने वाले प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष औजारों का प्रकटीकरण इस पुस्तक में बड़ी प्रामाणिकता के साथ हुआ है. प्रतिरूपी पुरुष द्वारा पत्नी रूपी स्त्री के साथ मारपीट करने को सुधा जी ने शारीरिक दृष्टि से बलशाली पुरुष द्वारा एक कम शक्तिशाली अस्तित्व का दमन करना बताया है. पतियों द्वारा की जाने वाली शारीरिक हिंसा के एक बेहद सूक्ष्म प्रकार की भी उन्होंने चर्चा की है जिसे मानसिक प्रताड़ना कहते हैं. ''पुरुष कुछ समय बाद ही जान लेता है कि पत्नी को सजा देने का सबसे बेहतरीन तरीका या नुस्खा क्या है. उसे कितने नुकीले या कितने भोथरे औजार किस तरह इस्तेमाल करने हैं. वह जानता है कि पत्नी पर शारीरिक बल का इस्तेमाल कर या उसे चांटा मारकर वह उतनी तकलीफ नहीं पहुंचा सकता जितनी उसकी उपेक्षा या अवहेलना करके...वह अपनी पत्नी को अवहेलना के धीमे जहर से खत्म करना चाहता है. संवादहीनता की स्थिति से पैदा हुई इस स्लो डेथ को जब तक पत्नी पहचानने की कोशिश करती है वह भीतर से पूरी तरह टूट चुकी होती है. (पृ. 147)

यहां पर यह उल्लेखनीय है कि सिर्फ स्त्री-पुरुष संबंधों तक ही लेखिका की दृष्टि सीमित नहीं है अपितु इस पुरुष प्रधान पितृसत्तात्मक समाज में एक स्त्री के दूसरी स्त्री के साथ पारस्परिक संबंधों को भी उन्होंने टटोला है. एक स्त्री के दूसरी स्त्री के साथ संबंधों में सर्वप्रथम सास-बहू संबंधों को लिया जा सकता है. 'औरत से जुड़े मिथ' में लेखिका सास-बहू के कटुतापूर्ण संबंधों की जड़ें शोषक-शोषित संबंध से जोड़ती हैं—''बरसों से दमित प्रताड़ित एक औरत (सास) के हाथ में जैसे ही सत्ता आती है वह सत्ताधारी शोषित बन जाती है.'' (पृ. 61) जो औरत उम्र भर गृहस्वामी रूपी पति से दबती आई है. बेटे के विवाह के बाद सत्ता का पहला अवसर पाते ही स्वयं उसी मालिक पुरुष का प्रतिरूप बन जाती है. होना यह चाहिए था कि वह अपनी बहू को ऐसा

प्यार, सुरक्षा व अपनापन देती जो उसे कभी नहीं मिला पर पीढ़ियों का अंतर उसे अपना दलित और दमित तबका भुला देता है और भीतर की दबी कुंठा और यातना की चिंगारियां हवा पाते ही सुलगने लगती हैं. वह प्रतिशोध जो वह अपनी सास या ससुर से ले नहीं पाई अपनी बहू को यातना के रास्ते बह निकलता है.

मीडिया में औरत के अंतर्गत टेलीविजन व सिनेमा पर विशेष तौर से लेखिका ने अपनी दृष्टि केंद्रित की है. बाजारवाद व उपभोक्ता संस्कृति के इस युग में मीडिया भी इनके प्रभाव से अछूता नहीं रहा. टेलीविजन की पैठ बहुत व्यापक है. समकालीन समाज व देश की यथार्थ स्थिति बुनियादी समस्याओं, उनके कारणों, समाधानों को लेकर जनता को जागरूक करने के स्थान पर टीवी उपभोक्ता संस्कृति व बाजारवाद के प्रचार-प्रसार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है. गरीबी रेखा से भी नीचे जीवन गुजारने वाला साधनहीन तबका अपनी अति सीमित गाढ़ी कमाई शिक्षा स्वास्थ्य पर खर्च करने की बजाय इन पर जाया करता है—"यह हमारे छोटे पर्दे की जादूगरी है जो आदिवासी मोढ़ी के सिर चढ़कर अपने करतब दिखा रही है. गांव के घर-घर में गैस नहीं पहुंची. अब भी सिगड़ी जलती है और लकड़ी का कोयला धुंधुआता है पर वहां बेसन, हल्दी और मुल्तानी मिट्टी को स्थगित कर फेयर एंड लवली पहुंच चुकी है. (पृ. 223)

फिल्मों में फूलन देवी के जीवन पर आधारित बैंडिट क्वीन व भंवरी देवी के जीवन पर केंद्रित बवंडर फिल्म के विषय में सुधा अरोड़ा जी ने इस पुस्तक में लिखा हैं. बैंडिट क्वीन पूरी तरह एक दलित औरत के डकैत बनने की प्रक्रिया की एक प्रामाणिक कहानी है व निर्देशक की सहानुभूति फूलन के साथ है. फिल्मकार ने उन परिस्थितियों को बड़ी कलात्मकता के साथ उभारा है जिनके कारण एक दलित स्त्री डकैत स्त्री के रूप में परिवर्तित हुई. डकैत वह स्वेच्छा से नहीं बनी थी. शोषण एवं उत्पीड़न की प्रतिक्रिया स्वरूप फूलन ने डकैत जीवन को अपनाया था. बैंडिट क्वीन एक संवेदनशील फिल्म थी वह एक डकैत औरत के प्रति सहानुभूति अर्जित करने में सफल रही थी. इसके समानांतर सामूहिक बलात्कार की शिकार भंवरी के जीवन पर बनी बवंडर नामक फिल्म के जरिए फिल्म के निर्माता निर्देशक तो फायदे में रहे—"फिल्म विदेशों में रिलीज हुई व चर्चित भी रही. फ्रांस में फिल्म फेस्टिवल में नंदिता दास को सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का अवार्ड भी मिला. जगमोहन मूंघड़ा फिल्म निर्माण और निर्देशन की अपनी सॉफ्ट पार्न फिल्ममेकर की इमेज बदलना चाहते थे और वह उसमें सफल भी रहे." (पृ. 217) पर फिल्म प्रदर्शन के बाद भंवरी ग्रामीण परिवेश में और भी ज्यादा उपेक्षित अपमानित हो गई—"भंवरी के बेटे को साथ पढ़ते लड़के बहुत परेशान करते, रोज उसे चिढ़ाया जाता." कित्ता रोकड़ा लिया तेरी मां ने? साली रांड का बेटा, हरामी, मां की चुदाई का खाता है" (पृ. 219) वस्तुस्थिति यह है कि बैंडिट क्वीन फूलन ने फिल्म की ऑस्कर में एंट्री रुकवा कर निर्माता निर्देशक से बीसेक लाख वसूल लिए थे पर भंवरी को आज तक बवंडर फिल्म के निर्माता की ओर से एक फूटी कौड़ी तक नहीं मिली." (पृ. 213). इस संदर्भ में लेखिका का कथन है—"वह फार्मूलाबद्ध कमर्शियल सिनेमा हो या कम बजट वाला समानांतर सिनेमा, है वह अंततः खालिस व्यवसाय ही जिसमें झूठ, बेईमानी, तिकड़म, दोमुंहापन सभी पैसा या नाम तक पहुंचने की सीढ़ियां मात्र हैं (पृ. 214). हम जैसे तथाकथित क्रिएटिव कलाकार, अभिनेता, रचनाकार जीते-जागते लोगों के संघर्ष को अपनी कला में, अपने हक में, अपने नाम के लिए सिर्फ इस्तेमाल करना जानते हैं. उनके मकसद को मंजिल तक पहुंचाने में कोई भूमिका नहीं निभाते. (पृ. 219)

ऐसे लेखक निर्देशक निर्माताओं की एक लंबी पांत है जिन्हें सामाजिक मुद्दों से कोई सरोकार नहीं. उन्हें केवल सनसनी फैलाकर अधिक मुनाफा देने वाले मद्दे चाहिए.

पुस्तक के अंतिम खंड 'औरत की जिंदगी में धर्म का खलल : कुरान की नारीवादी व्याख्या' के अंतर्गत लेखिका ने इस्लाम में नारी की स्थिति व उसके नियामक कारणों का विश्लेषण किया है. "बहु विवाह, तलाक, बुरका प्रथा और सुन्नत की यातना के साथ औरत कई

लघुकथा

वजह

अशोक गुप्ता

मैं हर समय अपनी आंखों के भीतर एक अजीब सी घुड़दौड़ देखता हूं जिसमें दोनों तरफ मुंह वाले बेशुमार घोड़े अंधाधुंध दौड़ते रहते हैं. घोड़े एक दिशा में दौड़ते-दौड़ते यकायक विपरीत दिशा में गतिशील हो जाते हैं और सारा कुछ एक बेइंतहां भगदड़ में तब्दील हो जाता है.

ऐसे में क्या होता है कि हर हालत में एक जिंदा जिस्म के साथ उसका एक मुर्दा-सा हिस्सा बेमतलब घिसटता सा रहता है. किसी इकतरफा लड़ाई की तरह, जिसमें जिंदगी का असली चेहरा रू-ब-रू होता है. उस हालत में कुछ भी लिखना रेगिस्तान में तूफान के समय शुतुरमुर्ग की तरह रेत में गर्दन डालकर चारों तरफ से बेखबर हो जाने भर होता है.

कभी-कभी भागते हुए घोड़ों के दोनों सिरे एक साथ चेतन हो उठते हैं और कुलांचे भरने लगते हैं. वह हालत बड़ी दिलचस्प होती है, जब एक सपने का आकाश छूता पेड़ दूसरे सपने के चौबारे में फंस कर पतिंगे सा छटपटाने लगता है और उसके जिस्म का सारा खून उसका अपना होकर वहीं ठहर जाता है. ऐसे में मुझे अपनी प्रेमिका की बेहद याद आने लगती है, नथुनों में शराब की महक बहुत गहरी होकर गमकने लगती है. शहर का हर स्पीड ब्रेकर सपाट हो जाता है, और गंतव्य गायब...ऐसे में एफिल टावर पर चढ़कर अपने लिखे हुए कागजों के ग्लाईडर बनाकर हवा में उड़ा देना और उन्हें जमीन छूने तक एकटक देखते जाने का ख्याल बहुत नायाब लगने लगता है.

कैसे हो अगर मैं उन तमाम दो मुंह वाले घोड़ों के बीच एक तलवार वाला आदमी पैदा कर दूं जो इन्हें बीच से काटकर मुर्दा घसीटते जाने और तनातनी की बेवजह लड़ाई से मुक्त कर दे...? लेकिन मैं यह सोचकर रुक जाता हूं कि आखिर तब मेरे भीतर जिंदा रहने की और लिखने की वजह क्या बाकी रह जाएगी...

बी 11/45, सेक्टर 18, रोहिणी, दिल्ली-89
मो. : 9871187875

इस्लामी मुल्कों में गैरबराबरी का दर्जा झेल रही है व धार्मिक पाबंदियों के कारण संवैधानिक हक पाने में असमर्थ रही है. (पृ. 243). इनके कारणों की तह में विद्यमान है कुरान की भ्रामक व्याख्याएं जिन्होंने पुरुष को स्त्री से श्रेष्ठ बताया है–"जैसे ही लिंग विभेद के खिलाफ बात करे और कहें कि मर्द और औरत इस्लाम में बराबर हैं आपके सामने कुरान के चौथे अध्याय की 34वीं आयत रख दी जाती है जिसका गलत विश्लेषण है कि मर्द को औरत पर शासन के लिए भेजा गया है जबकि अर्थ है कि पुरुष औरतों के संरक्षक है क्योंकि वह अर्थ कमा कर लाते हैं और अपनी कमाई दौलत में से घर की औरतों पर खर्च करते हैं. इसे उस समय के संदर्भ में भी जोड़कर देखा जाना चाहिए जब अर्थोपार्जन सिर्फ पुरुष के जिम्मे था...औरत के संदर्भ में कुरान की अंतिम स्थापना यही है कि खुदा की निगाह में औरत व मर्द समान हैं. (पृ. 250-251).

इस विषय में यह विवेचनीय है कि इस्लामिक अध्येताओं के अनुसार कुरान की स्थापनाओं को हदीसों से खारिज नहीं किया जा सकता किंतु व्यवहार में कई जगह हदीसों ने कुरान की अवधारणाओं को खारिज किया है. वर्तमान काल में स्त्री संबंधी कई चर्चित प्रसंग भी इस पुस्तक में आए हैं यथा 'सफिया बीवी से इमराना तक' संबंधी लेख में परिवर्तन के विरोधी व यथास्थिति के पोषक 'फतवों' की जड़ता पर प्रहार किया गया है. इस प्रकरण में ससुर के बलात्कार की शिकार पांच बच्चों की मां इमराना की पीड़ा को दरकिनार कर सुसर को सजा देने की बजाय इमराना को ही ससुर संसर्ग के कारण पति के लिए हराम घोषित कर दिया जाता है. पाकिस्तान में घटित सफिया बीवी प्रकरण की चर्चा 'हदद कानून' के अमानवीय चेहरे से पर्दा उठाती है.

लेखिका की सहानुभूति दलित स्त्री के साथ भी है. दलित स्त्री पर बलात्कार, उन्हें निर्वस्त्र कर बेरहमी से पीटना और फिर गांव भर में घुमाना जैसे अमानवीय कृत्यों की भर्त्सना स्थान-स्थान पर पुस्तक में आई है.

हमारे सामाजिक जीवन में स्थान रखने वाली अनेक बातें, अनेक प्रथाएं इस पुस्तक में आई हैं. जैसे 8 मार्च को महिला दिवस के रूप में मनाने के खोखलेपन की ओर सुधा जी ने संकेत किए हैं. महिला दिवस होने के बाद भी आम महिला का इससे कोई सरोकार नहीं है. यह सिर्फ महिला संगठनों तक ही सीमित होकर रह गया है. ऐसे में लेखिका का सुझाव है कि वस्तुस्थिति में परिवर्तन के लिए उन महिलाओं को सक्रिय होना चाहिए जो सत्ता में हैं व अपनी बात मनवाने का सामर्थ्य रखती हैं.

ऐसे ही आज रैगिंग के विकृत स्वरूप पर लेखिका का कथन है, "रैगिंग की शुरुआत सीनियर छात्रों और नए छात्रों के बीच एक पहचान कायम करने के तौर पर हुई थी. धीरे-धीरे जब हर ओर सांस्कृतिक विघटन व अवमूल्यन शुरू हुआ तो कॉलेज का वातावरण उससे अछूता कैसे रह सकता था. नए छात्रों और उनकी विशिष्टताओं से परिचित होने के बजाय सीनियर छात्रों द्वारा उन्हें आतंकित करना और उन्हें अवांछित व विकृत फरमाइशों द्वारा नर्वस ब्रेक डाउन की कगार पर धकेलकर त्रासद आनंद हासिल करना रैगिंग का पर्याय बन गया है. (पृ. 91)

अंत में बकौल मृणाल पांडे वरिष्ठ लेखिका सुधा अरोड़ा के स्त्री विषयक आलेखों का यह संकलन स्त्री विमर्श संबंधी बहस को एक गंभीरता और संवेदन- शीलता की ओर मोड़ता है. एक वयस्क स्त्री मन और दमदार लेखनी के मणिकांचन सहयोग से गढ़ी यह रचनाएं स्त्री विमर्श को आदर और गंभीरता से लेने वाले सभी संवेदनशील पाठकों के लिए एक पठनीय दस्तावेज सामने लाती है. (कादंबिनी, जुलाई 2009, पृ. 54)

डी-160, ग्राउंड फ्लोर, रामप्रस्थ, गाजियाबाद-201011
फोन : 0120-4112550, 09312045796

❐

संशय

अशोक गुप्ता

सर्दी की एक सुबह कस्बे के बस अड्डे के पास कुछ बुजुर्ग लोग बैठे धूप सेंक रहे थे. पास ही खड़ा एक शहरी नौजवान अपनी बस का इंतज़ार कर रहा था.

बुजुर्गों की बातों में और होता ही क्या...बस, गए ज़माने की याद और नए ज़माने का अजीब मिजाज़. पहले सब मजबूत चीजें लोहे की बनती थीं...फिर आया फौलाद, जो लोहे से भी जबर कहलाता था...अरे हर मजबूत चीज की मिसाल फौलाद से दी जाती थी...जैसे बहादुर का फौलादी जिस्म, फौलादी इरादे.

...और पत्थर का भी खूब इस्तेमाल होता था. अडिग शिला सा टस से मस न होने वाला पत्थर. इसीलिए तो पत्थर दिल नाम धरा जाता था किसी-किसी का..

नौजवान उनकी बातें गौर से सुन रहा था, हालांकि उसका ध्यान बस की तरफ भी था.

"...और अब तो भाई प्लास्टिक का जमाना है. लोहे की जगह प्लास्टिक, पत्थर की जगह प्लास्टिक...और तो और कपड़ा और रस्सी धागा तक प्लास्टिक के हो गए. जमाना बदल गया देखते-देखते..." एक बुजुर्ग ने कहा.

फिर एक बुजुर्ग ने बीड़ी सुलगाई और बात का रुख बदला, "...अब आज अगर शाहजहां होता तो क्या वह भी प्लास्टिक का ताजमहल बनवाता...? कैसा लगता प्लास्टिक का ताजमहल...खिलौने जैसा, और कितने दिन चलता...?" बुजुर्गों के बीच एक कौतुक भरे संशय की लहर दौड़ गई.

उनकी बात सुन रहे नौजवान से नहीं रहा गया, वह बीच में बोल ही पड़ा, "अरे ताऊ, आज अगर शाहजहां होता तो वह ताजमहल बनवाने के चक्कर में पड़ता ही क्यों...सीधे-सीधे प्लास्टिक की मुमताज़ ही न बनवाता...सस्ती की सस्ती और उम्र भर साथ भी देती..."

बुजुर्गों के बीच सनसनी फैल गई. किसी के दिमाग में यह बात ठहर नहीं रही थी. भला प्लास्टिक की मुमताज़ से मोहब्बत कैसे करता शाहजहां...? लेकिन क्या पता नए ज़माने में ऐसा हो सकता हो, तभी तो नौजवान ने ऐसा कहा.

"तब तो क्या पता प्लास्टिक का दिल भी होता हो, जो लग सकता हो प्लास्टिक की मुमताज़ से..."

"क्या पता...?" संशय से घिरे बुजुर्गों ने नौजवान की ओर देखा. नए ज़माने की बातें सिर्फ उसी को पता थीं, लेकिन वह नौजवान वहां था कहां, वह तो अपनी बस पकड़ कर जा चुका था.

बुजुर्गों के बीच अब सिर्फ हैरत भरा संशय था.

बी 11/45, सेक्टर 18, रोहिणी, दिल्ली-89
मो. : 9871187875